अध्याय–10
धार्मिक सहिष्णुता एवं सर्वधर्म समभाव

धर्म (रिलिजन) की अनेकता की समस्या वर्तमान युग में विशेष रूप से महत्व रखती है, क्योंकि रिलिजन के नाम पर या उसका सहारा लेकर अनुयायियों के मध्य संघर्ष, तनाव विघटन दिखाई पड़ता है। वस्तुतः इस समस्या के मूल में धर्म के वास्तविक स्वरूप के प्रति आंशिक अथवा भ्रान्तिमूलक ज्ञान ही होता है। अंग्रेजी का रिलिजन शब्द का अर्थ ही है ''एक साथ बांधना''। भारतीय अवधारणा में धर्म का अर्थ है धारण करना। फिर भी धार्मिक संघर्ष अथवा तनाव सही मायने में जातीय एवं सांस्कृतिक संघर्ष को धर्म या रिलिजन के साथ जोड़ कर उसे व्यापक स्वरूप दिया जाना है। जिस प्रकार धार्मिक कुरूतियों ने नये धर्मों (रिलिजन) को जन्म दिया, उसी प्रकार धार्मिक संघर्षों ने ही धर्म समन्वय का मार्ग प्रशस्त किया। यह धर्म समन्वय अनेक समयों में अनेक रूपों में होता आया है, किन्तु इन्हें सैद्धान्तिक रूप तथा परिभाषिक रूप देने का कार्य आधुनिक युग में ही हुआ है। इस दृष्टि से तीन अवधारणाएं प्रमुख हैः– धार्मिक एकता (Religious Unity), धार्मिक सहिष्णुता (Religious Tolerance) तथा धार्मिक बहुत्ववाद (Religious Pluralism)। धार्मिक एकता का तात्पर्य है, जब विभिन्न धर्म या धर्मावलम्बी एकमत या एक धर्म में समाहित हो जाएं। धार्मिक सहिष्णुता का तात्पर्य है, विभिन्न धर्मानुयायी परस्पर धार्मिक विरोधाभाव न रखें। धार्मिक बहुत्ववाद का तात्पर्य है, विभिन्न धर्मावलम्बी अन्य धर्मों के प्रति समभाव रखें। उक्त अवधारणाओं की यह स्थूल परिभाषा है। इनमें धार्मिक सहिष्णुता की अवधारणा समय की आवश्कता है।

(i) धर्म–सहिष्णुता (Religions Tolerance)

धर्म–सहिष्णुता का तात्पर्य है अन्य धर्मों के प्रति सहनशीलता का भाव अर्थात उनके प्रति द्वेष या विरोध का भाव न रखना। वर्तमान लोकतांत्रिक युग में विविध रूप से धार्मिक स्वतंत्रता की स्थापना के साथ अवधारणागत रूप से धार्मिक सहिष्णुता को विशेष महत्ता मिली है। धार्मिक सहिष्णुता और धार्मिक स्वतन्त्रता में धनात्मक संबंध अवश्य है, परन्तु दोनों एक नहीं है। प्रथम मुख्यतः वैचारिक अवधारणा है, जबकि द्वितीय विविध अवधारणा। यह अवश्य है कि एक ही अभिव्यक्ति दूसरे में होती है।

धार्मिक सहिष्णुता, सर्वधर्म समभाव नहीं है–धार्मिक सहिष्णुता धर्मनिरपेक्षता और सर्वधर्म–समभाव के मध्य की स्थिति की तरह है धार्मिक सहिष्णुता तथा उनकी ओर बढ़ने का एक कदम भी है। धर्म–सहिष्णुता में व्यक्ति धार्मिक बना रहता है, बस अन्य धर्मों के प्रति द्वेष भाव समाप्त कर लेता है। अन्य धर्मों के प्रति उसमें सब प्रकार की उदासीनता का भाव विकसित हो जाता है। धर्म–सहिष्णुता, धर्मनिरपेक्षता के उलट धार्मिक समभाव की तरह सापेक्षित अवधारणा है, जिसकी सार्थकता अन्य धर्मों के साथ होने पर ही है। धार्मिक समभाव तथा सहिष्णुता दोनों ही धार्मिक बहुत्वाद के अंग माने जा सकते हैं, किन्तु धार्मिक समभाव में अनेक धर्मों के समादर और समावेश का भी भाव है, जो कि धर्म सहिष्णुता में नहीं है।

धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता–धर्म की सबसे बड़ी विडम्बना उसका न तो अलौकिक होना है और न ही आस्थापरक होना नहीं है वरन् उसकी विडम्बना है, उसका श्रेष्ठता की ग्रन्थि से ग्रस्त होना। प्रत्येक धर्म और उसका अनुयायी अपने धर्म, अपने धर्मग्रन्थ, अपने धर्मस्थल को श्रेष्ठ मानकर बैठ जाता है। इसी का दूसरा पहलू है–अन्य धर्मों के प्रति हिनता का भाव। विश्व में शायद ऐसा कोई व्यक्ति नहीं होगा, जो किसी अन्य के धर्म में दो निरर्थक, चार हास्यापद और आठ अन्धविश्वासपूर्ण मताग्रह न गिना दे। इसके बावजूद ऐसा कोई मत या सिद्धान्त नहीं होगा, जिसे तर्कतः सुसंगत या व्यवहारतः उपयोगी सिद्ध न किया जा सके। यह सब कुछ हमारी दृष्टि पर निर्भर करता है, अतः सबसे पहली आवश्यकता है दृष्टिकोण के परिवर्तन की। धर्म सहिष्णुता इसी आत्मश्रेष्ठता और परहीनता से मुक्ति की दिशा में बढ़ा कदम है।

प्रिस्टन किंग ने ठीक ही कहा है–'हम किसी व्यक्ति, समुदाय अथवा शासन की केवल इस प्रकार प्रशंसा नहीं कर सकते कि सहिष्णु है। ये सब निर्दयता और जन–संहार के प्रति सहनशील हो सकते हैं। इसी प्रकार हम व्यक्तियों की मात्र इस कारण भी निंदा नहीं कर सकते कि वे असहिष्णु हैं। इस प्रकार सब कुछ सहिष्णुता और असहिष्णुता पर निर्भर न होकर उनके लिए उपयुक्त विषयो पर भी निर्भर करता है।' यदि इस तर्क को स्वीकार करें, तो धार्मिक सहिष्णुता भी एक दृष्टि से उचित तो दुसरी दृष्टि से अनुचित हो सकती है, इसी प्रकार यदि यह सहिष्णुता कुरीतियों व अंधविश्वास के प्रति है, तो हानि रहित कर्मकाण्डीय विधानों के प्रति है, तो वह उचित है। धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता सबसे ज्यादा ऐसे कर्मकाण्डीय व औपचारिक विधानों के कारण है, जो आज या तो निरर्थक हो गए हैं या फिर दूसरों के लिए बाधक बन गए है। यदि सभी धर्मों में सभी चीजें सार्थक और सकारात्मक ही होती, तो धर्म–सहिष्णुता की न तो आवश्यकता होती, न ही उसकी महत्ता।

धर्म–सहिष्णुता वस्तुतः धार्मिक असहिष्णुता के अभाव में ही अपनी महत्ता रूपाकिंत करती है। आखिर क्या कारण है कि इतनी वैज्ञानिकता और बौद्धिकता के युग में भी धार्मिक मामलों में इतनी असहिष्णुता बनी हुई है। इसके पीछे धार्मिक, शैक्षणिक, सामाजिक, मानसिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक–सभी तरह के कारण हो सकते है।

असहिष्णुता के कारण– सर्वप्रथम, तो प्रत्येक नवीन धर्म पुरातन धर्म की आलोचना के साथ प्रारंभ होता है। इस ऐतिहासिक विकास के क्रम में परस्पर आलोचना–प्रत्यालोचना का जो क्रम चलता है, वह धर्मग्रन्थों और धर्मगाथाओं तक में निबद्ध हो जाता है और फिर धर्मों के मध्य शाश्वत् रूप से बना रहने वाला अंतराल बन जाता है। यह अंतराल पट भी जाए, तो तमाम कड़वी यादे छोड़ जाता है। ऐसे ही अंतराल धर्मों के प्रचार–प्रसार प्रभाव बढ़ाने के क्रम में भी पेदा होते रहे है। विशेषतः धर्म–परिर्वतन पर बल देने वाले धर्मों के साथ ऐसा प्रायः घटित होता दिखाई दे सकता है।

धार्मिकता की दूसरी बड़ी विड़म्बना यह है कि यह परिवार से जन्म लेती है। धर्म किसी व्यक्ति का बौद्धिक चयन नही, इसका पारिवारिक संस्कार होता है। हममें में से अधिकांश व्यक्ति किसी धर्म–विशेष को केवल इस कारण मान रहे होते है कि हमारे माता–पिता ने वह धर्म अपना रखा होता है। पांच वर्ष का शासन चुननें के लिए तो वयस्क होने तक प्रतिक्षा की जाती है, किन्तु जीवन भर का मार्ग अपनाने के लिए कम से कम उम्र में संस्कार डाल दिये जाने के प्रयास किये जाते है। यह मात्र पारिवारिक विरासत बन कर रह जाता है और परिवार अपने घरों की चार दिवारो की तरह धर्म को भी पुरानी चार दिवारों तक में सिमटे रखने की हर सम्भव कोशिश करते रहते हैं। परिवार में न तो कोई दूसरे धर्म का व्यक्ति होता है, न ही उसके प्रति कोई आदर। समाज वैज्ञानिकों का मानना है कि जिस दिन विवाह में धर्म (रिलिजन) बाधा न रह जाये, उस दिन सही मायने में धार्मिक सहिष्णुता और धार्मिक समभाव विकसित होगा।

सामाजिक दृष्टि से भी व्यक्ति प्रायः अपने सम्प्रदायों और मतों के साथ अपने को जोड़ कर रखने के आदि होते है। शायद ही कभी एक धर्म का व्यक्ति दूसरे के धर्म के विधानों–त्यौहारों में कोई सक्रिय भाग लेता हो और यदि ऐसा करें भी, तो उसकी निष्ठा प्रायः राजनितिक मान ली जाती है। ऐतिहासिक रूप से गठित साम्प्रदायिक संघर्षों के कारण भी ऐसा धार्मिक ध्रुवीकरण प्रबल हुआ है । हमारी सामाजिक परम्परा में आर्थिक संबंध भले ही व्यापक हों, पर आन्तरिक संबंध प्रायः धर्म की सीमाओं में बंध कर रह जाते है। सामान्य काल में तो हम उदारता की बातें करते है, किन्तु आपातकाल में बस अपने धर्म के सदस्य बनकर रह जाते है।

इन्हीं परिस्थितियों में राजनैतिक कारण भी प्रभावी हो जाते है। इतिहास साक्षी है कि शासन के पास जो शक्ति रही है, उससें भी प्रायः धार्मिक भेद–भाव बढ़ा है। दूसरी और यदि शासन को शक्ति देने वाली जनता में भी बहुमत किसी एक वर्ग का हो, तो तुष्टकीरण बढ़ जाता है, फलतः प्रतिक्रियातमक असष्णिुता बढ़ती जाती है।

धार्मिक असहिष्णुता की मानसिक कारण में धर्म की आत्म श्रेष्ठता की ग्रंथि और अन्य के प्रति तुच्छता का भाव प्रायः सर्वाधिक मुखर कारण के रूम में सामने आता रहता है। संभव है, हमें अन्यों की कमियों के सापेक्ष अपने धर्म में भी कमियां दिखाई देने लगें, लेकिन जैसे ही कोई पराया उस पर आक्षेप करेगा, हम तत्काल उसकी प्रतिरक्षा में सन्नद्ध हो जाते है। आस्थापरक होने के कारण हम उन विसंगतियों के प्रति अंधे तथा आपतियों के प्रति उग्र हो जाते है।

सर्वधर्म–समभाववाद, धार्मिक बहुत्ववाद से घनिष्ठ रूप से जुड़ा अवश्य है, किन्तु उसका पर्याय नहीं है। इनमें प्रथम मुख्यतः पाश्चातयः अवधारणा है, जबकि द्वितीय मुख्यतः पूर्वी या भारतीय अवधारणा, धार्मिक बहुत्ववाद का बल धर्मों के विविधतापूर्ण सह–अस्तित्व पर है, जबकि धार्मिक समभाव का विविध धर्मों समादर है। प्रथम का बल धर्मों के सीमाकंन पर है, जबकि द्वितीय का बल धर्मों के समन्वयन पर है। धार्मिक बहुत्ववाद का जो संबंध धार्मिक स्वतंत्रता से है, वही संबंध धार्मिक समभाव का धार्मिक समानता से है।

(ii) सर्वधर्मसमभाव की सनातनी संस्कृति

धार्मिक सह–अस्तित्ववाद का दार्शनिक रूप से उद्‌भव पश्चिम में मूलतः आधुनिक युग में ही हुआ माना जाता है और पाश्चात्य दर्शन की दृष्टि से लगभग सही भी है। संसार के एकेश्वरवादी धर्मों में अन्य के प्रति समादर तो दूर सहिष्णुता तक का भाव सबसे कम पाया जाता है। इस दृष्टि से भारतीय उप महाद्वीप अपनी विविध विसंगतियों के बावजूद श्रेष्ठतमः दृष्टांत प्रस्तुत करता रहा है। सनातन धर्म के विकास का इतिहास स्वंय ही धार्मिक समभाव का इतिहास रहा है। जिसे हम धार्मिक एकता की अध्याय में देख भी चुके है। सनातन धर्म केवल स्वंय में आंतरिक रूप से भिन्न मतों का धारक नही रहा है, अपितु अन्य धर्मों के प्रति भी आदर परक रहा है। जैन धर्म के प्रथम प्रर्वतक ऋषभदेव को हिन्दू धर्म के चौबिस अवतारों में तथा बौद्धधर्म के प्रर्वतक गौतम बुद्ध को दस अवतारों में परिगणित किया गया है। भविष्य पुराण में ईसामसीह तथा हजरत मौहम्मद तक को ईश्वर रूप या ईश्वर दूत के रूप में प्रतिष्ठा दी गई है। उसके लिए कबीर भी पूज्य है और नानक भी । ''एकम् सद् विप्रा बहुधा वदंति' का उद्‌घोष करने वाले इस धर्म की एक प्रसिद्ध उक्ति है–

रूचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिल नानापथजुषां।
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसार्णवमिव।।

अर्थात् सबकी रूचियाँ भिन्न है, इसलिए सबके पंथ भिन्न है। हे ईश्वर! इस प्रकार सभी मानवों का तू ही गंतव्य है, ठीक वैसे ही जैसे सब नदियाँ एक सागर में जा मिलती है।

कन्फूशियस, शिन्तों तथा बौद्धधर्म भी धार्मिक समभाव के अनन्य दृष्टांत है। चीन, जापान व दक्षिणी एशियाई देशों में यह धर्म परस्पर इस प्रकार सह–अस्तित्व कायम किये हुये है कि वहां एक ही आदमी दो दो धर्म एक साथ मानते दिख सकता है। जापान में एक व्यक्ति जीवन में शिन्तों तथ मृत्यों के संबंध में बौद्ध धर्म अपनाते हुए दिख सकता है। आम जैनी को हम हिन्दु मंदिरों में जाते और हिन्दु पर्व त्यौहार मनाते सरलता देख सकते है। यह उनके सापेक्षवाद व स्याद्वाद् के अनुरूप ही है। बहाई धर्म में भी प्रायः यही विचारधारा है।

भारतीय और चीनी परिक्षेत्र इन मामलो में श्रेष्ठ दृष्टांत प्रस्तुत करते है। चीन में कन्फयूशियस और ताओ धर्म सहस्त्राब्दियों से बिना संघर्ष सह–अस्तित्व बनाए रहे, जबकि दोनो की धारणाएँ प्रायः परस्पर विपरीत है। भारत से गए बौद्ध धर्म को भी वहाँ बिना किसी दुराग्रह के स्वीकार किया गया। भारतीय परम्परा में हिन्दु तथा जैन धर्म ने इसके शिखर मानदण्ड स्थापित किए। हिन्दु धर्म प्रारम्भ से ही बहुत्ववादी और समन्वयवादी था, जिसके दृष्टान्त हम धार्मिक एकता के अध्याय में देख चुके हैं। जैन धर्म ने अपने अनेकांतवाद व सापेक्षिकतावाद से इस मार्ग को प्रशस्त किया।

सर्वधर्म–समभाव ने धर्मों के सह अस्तित्ववाद का मार्ग प्रशस्त किया है। इसे हमें बहुसंस्कृतिवाद के रूप में भी देखना चाहिए, क्योंकि धर्म का एक बड़ा भाग वहाँ की संस्कृति से जुड़ा होता है। सच कहें, तो धार्मिक संघर्ष का निदान या तो सर्वधर्म–समभाव है या फिर धर्म निरपेक्षता। सर्वधर्म–समभाव को हम धर्मनिरपेक्षता का ही भावात्मक पक्ष मान लेते है या फिर धर्मनिरपेक्षता को सर्वधर्म–समभाव का निषेधात्मक पक्ष। दोनो सम्मान महत्व है। राज्य के स्तर पर तो धर्मनिरपेक्षता रहे और व्यक्ति के स्तर पर सर्वधम–समभाव, यही श्रेष्ठ विकल्प है।

विभिन्न धर्मों में सार्वभौमिक जीवन दृष्टि– भारतीय अवधारणा में धर्म का अर्थ नैतिक कर्म से आबद्ध है और इस हेतु प्रत्येक प्राणी मात्र, अवस्था एवं परिस्थितिजन्य धार्मिक उत्तरदायित्व निर्धारित किये गये है। परन्तु पश्चिम में उक्त धारणा को आध्यात्म की ओर दिशा दे दी, जिससे पूजा पद्धति, प्रवर्तक की शिक्षाएं एवं उसका अनुसरण धर्म (रिलिजन) का आधार बनते गये। यद्यपि सभी धर्मो में मूल तत्व ईश्वर है। अध्यात्म की दृष्टि से प्रमुख रूप से धर्म को भारतीय सनातन विचारधारा एवं अब्रहमिक विचारधारा में विचारित किया जा सकता है। भारतीय विचारधारा में धर्म का अर्थ शाश्वत नैतिक नियम एवं सतत् विकासशीलता है। इसमें धर्म एवं कर्म की धारणाएं प्रमुख है। विश्व एवं मानव कल्याण भारतीय सनातन धर्म की सुरभी है इनमें प्रमुखतः हिन्दू (सनातन), सिख, जैन एवं बौद्ध मतों को सम्मिलित किया जाता है। दूसरी ओर अब्रहमिक विचार ऐकेश्वरवाद पर ही अवलम्बित है परन्तु उक्त में ईश्वर द्वारा पैगम्बर पर पवित्र पुस्तक, जिसमें मानव एवं सृष्टि संचालन के सभी नियम होते हैं, भेजी गई है। इस मत के अनुयायी अपने पैगम्बर एवं पवित्र पुस्तक जो कि ईश्वरीय कथन है के अनुरूप जीवन यापन करते है। इस विचार में प्रमुख रूप से यहूदी, मसीही, और इस्लाम आदि सम्मिलित है। उक्त प्रमुख आध्यात्मिक मतों के अतिरिक्त चीन–जापान में शीन्तों, ताओ, कन्फूशीवाद, ईरान का फारसी मत भी कुछ विद्धानों द्वारा धर्म (रिलिजन) की श्रेणी में लिया जाता है।

हिन्दू अथवा सनातन धर्म– हिन्दू धर्म नाम से किसी सम्प्रदाय को निरूपित नहीं किया जाता वरन् उक्त एक जीवन पद्धति का नाम है, जो सनातन काल से ही मानवकल्याण की दिशा मानव एवं विश्व को जीवन दर्शन देती आयी है। इसे वैदिक धर्म भी कहा जाता है परन्तु इसे केवल वैदिक विचार में ही आबद्ध नहीं किया जा सकता वरन् इसमें परिमार्जन ही, इसकी सनातनी स्वरूप को बनाए रखता है। इसलिये इसे साम्प्रदाय नहीं कहा जा सकता। इसे ''श्रुति–स्मृति–पुराणेक्त'' कहकर परिभाषित किया जाता है। उपनिषदों की दृष्टि से सम्पूर्ण जगत ब्रहा का ही एक रूप है और ये परम सत्ता ही सत्य है, परन्तु व्यक्तिगत मनोविज्ञान के आधार पर पर प्रत्येक व्यक्ति अपनी अभिरूचियों के आधार पर ईश्वर का प्रारंभिक स्वरूप बना लेता है परन्तु यह अपेक्षा की जाती है कि व्यक्ति अपने ईष्ट देवता, जिसे वह अपनी अभिरूची के अनुकूल पाता है, एक परम तत्त्व को ही देखे एवं समझे। सनातन (हिन्दू) धर्म के दो पक्ष है (1) विचार पक्ष एवं (2) आचार पक्ष । विचार पक्ष कर दृष्टि से इसके सांस्कृतिक गूढ़ दार्शनिक स्वरूप को देखा जाता है। प्रमुख छह दर्शन न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, पूर्व मीमींसा एवं उत्तर मीमांसा। ईश्वर हेतु इस जीवन पद्धति में तीन मार्ग ज्ञान, भक्ति, एवं कर्म तीन मार्ग बताए गये है। ज्ञाप मार्ग दर्शन एवं तर्क पर आधारित है। भक्ति मार्ग में प्रेम की अभिव्यक्ति हेतु ईश्वर से संबंध यथा पिता, भ्राता, माता अथवा प्रेमी के रूप में देख कर आसक्ति की अभिव्यक्ति होती है। कर्ममार्ग कर्मकाण्ड अथवा अनासक्ति का मार्ग है, विधि विधान का रास्ता है।

इस सांस्कृतिक जीवन में धर्म के आचरण पक्ष पर भी महत्व दिया गया है। अपने जीवन को धर्म अनुरूप जीने के लिये चार पुरूषार्थ, चार वर्ण एवं चार आश्रम का सिद्धान्त दिया गया है। चार पुरूषार्थ में धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष, चार वर्ण जो सामाजिक व्यवस्था हेतु कार्य के आधार पर निर्धारित होते थे, वे है ब्राहाम्ण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शुद्र। इसी प्रकार आश्रम जीवनकाल को ब्रहाचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ एवं सन्यास आश्रम है। जो आयु अनुरूप मनुष्य के लिये उत्तरदायित्व नियत करते

है। हिन्दु धर्म में मानव कल्याण का लक्ष्य स्पष्ट दिखाई पड़ता है। जिस प्रकार पर्वत से विभिन्न नदियां निकल कर सागर में जाकर एक साथ समाहित हो जाती है। उपासना मार्ग पृथक पृथक हो सकते है, पर अंतिम लक्ष्य सत्य अर्थात ईश्वर की प्राप्ति होता है।

बौद्धधर्म

बौद्धधर्म भारतीय सनातनी परम्परा का महत्वपूर्ण धर्म है, जिसके प्रवर्तक कपिलवस्तु के राजकुमार सिद्धार्थ थे, जिन्हें ज्ञान प्राप्ति के बाद बुद्ध कहा गया। बुद्ध के अनुसार मानव जीवन दुःखों से भरा हुआ है। बौद्ध धर्म में चार आर्य सत्य माने गये है– (1) दुःख है (2) दुःख का कारण है (3) दुःख का निरोध है एवं (4) दुःख निरोध का मार्ग है। दुःख से मुक्ति के लिये बौद्ध अष्टांग मार्ग बताते है। बौद्ध धर्म के अनुसार, चौथे आर्य सत्य का मार्ग अष्टांग मार्ग है वहीं दुःख निरोध पाने का रास्ता है। गौतम बुद्ध कहते थे कि चार आर्य सत्य की सत्यता का निश्चय करने के लिए इस मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

1. **सम्यक दृष्टि–** चार आर्य सत्य में विश्वास करना
2. **सम्यक संकल्प–** मानसिक और नैतिक विकास की प्रतिज्ञा करना
3. **सम्यक वाक–** हानिकारक बातें और झूठ न बोलना
4. **सम्यक कर्म–** हानिकारक कर्मों को न करना
5. **सम्यक जीविका–** कोई भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हानिकारक व्यापार न करना
6. **सम्यक व्यायाम–** अपने आप सुधरने की कोशिश करना
7. **सम्यक स्मृति–** स्पष्ट ज्ञान से देखने की मानसिक योग्यता पाने की कोशिश करना
8. **सम्यक समाधि–** निर्वाण पाना और स्वयं का गायब होना

मार्ग को तीन हिस्सों में वर्गीकृत किया जाता है वे त्रिरत्न कहलाते है– प्रज्ञा, शील और समाधि। शील का अर्थ है सात्विक कर्म करना।

बौद्धमत में की विशेषता उसका कर्म सिद्धान्त है उसके अनुसार '' अपने कर्मो के अन्तर के कारण मनुष्य एक समान नहीं होते। कुछ दीर्घायु, कुछ अल्पायु, कुछ स्वस्थ कुछ अस्वस्थ होते है।'' किन्तु कर्म का यह नियम यान्त्रिक रूप से कार्य नही करता वरन् मनुष्य स्वयं ही अपने कर्मो अपना भविष्य बनाता है। कर्म से ही मनुष्य निर्वाण की प्राप्ति करता है। निर्वाण के बाद पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति मिल जाती है। बौद्धधर्म का लक्ष्य भी मानव कल्याण, कर्म शुद्धि, दुःख निवारण एवं निर्वाण ही है।

जैन–

भारतीय सनातनी परम्परा में जैन मत का स्थान महत्वपूर्ण है। भारतीय सामजिक ढ़ांचे में इसे हिन्दु धर्म का ही एक अंग माना जाता है। ''जैन'' का अर्थ है – ''जिन द्वारा प्रवर्तित ''। ''जैन'' कहते हैं उन्हें, जो ''जिन'' के अनुयायी हों। ''जिन'' शब्द बना है ''जि'' धातु से। ''जि'' माने–जीतना। ''जिन'' माने जीतने वाला। जिन्होंने अपने मन को जीत लिया, अपनी वाणी को जीत लिया और अपनी काया को जीत लिया, वे हैं ''जिन''। जैन धर्म में अहिंसा को परम धर्म माना जाता है। जैन धर्म में श्रावक और मुनि दोनों के लिए पाँच व्रत बताए गए है। तीर्थंकर आदि महापुरुष जिनका पालन करते है, वह पंच महाव्रत कहलाते है –

- **अहिंसा–** किसी भी जीव को मन, वचन, काय से पीड़ा नहीं पहुँचाना।
- **सत्य–** हित, मित, प्रिय वचन बोलना।
- **अस्तेय–** बिना दी हुई वस्तु को ग्रहण नहीं करना।
- **ब्रह्मचर्य–** मन, वचन, काय से मैथुन कर्म का त्याग करना।
- **अपरिग्रह–** पदार्थों के प्रति ममत्वरूप परिणमन का बुद्धिपूर्वक त्याग।

मुनि इन व्रतों का सूक्ष्म रूप से पालन करते है, वही श्रावक स्थायी रूप से करते है।

जैन धर्म में जिन या अरिहन्त और तीर्थंकर की आराधना करते हैं और उन्हीं के निमित्त मंदिर आदि बनवाते हैं। जगत् का न तो कोई हर्ता है और न जीवों को कोई सुख दुःख देनेवाला है। अपने अपने कर्मों के अनुसार जीव सुख दुःख पाते हैं। जीव या आत्मा का मूल स्वभान शुद्ध, बुद्ध, सच्चिदानंदमय है, केवल पुदगल या कर्म के आवरण से उसका मूल स्वरुप आच्छादित हो जाता है। जिस समय यह पौद्गलिक भार हट जाता है उस समय आत्मा परमात्मा की उच्च दशा को प्राप्त होता है।

जैन मत ''स्यादवाद'' के नाम से भी प्रसिद्ध है। ''स्याद'' का अर्थ है अनेकांतवाद अर्थात् एक ही पदार्थ में नित्यत्व और अनित्यत्व, सादृश्य और विरुपत्व, सत्व और असत्व, अभिलाष्यत्व और अनभिलाष्यत्व आदि परस्पर भिन्न धर्मों का सापेक्ष स्वीकार। इस मत के अनुसार आकाश से लेकर दीपक पर्यंत समस्त पदार्थ नित्यत्व और अनित्यत्व आदि उभय धर्म युक्त है।

जैन धर्म में 24 तीर्थकंर है, जो इसे स्थापित करने वाले है प्रथम ऋषभदेव जिन्हें आदिनाथ कहा जाता है और 24 वें महावीर स्वामी है। श्री मद्भाग्वत में ऋषभदेव को विष्णु का आंठवा अवतार बताया गया है। अर्थात उक्त मत हिन्दु सनातनी मत के साथ रचा बसा है। अहिंसा को सर्वोपरी मानने वाले जैन मत में चार कषाय है तो बंधन के कारण माने जाते है –क्रोध, मान, माया, जिनके कारण कर्मों का आस्रव जीव की ओर होता है।

सिख–

हिन्दु सनातनी परम्परा का मत सिख धर्म (सिखमत और सिखी भी कहा जाता है) एक एकेश्वरवादी धर्म है। इस धर्म के अनुयायी को सिख कहा जाता है। सिखों का धार्मिक ग्रन्थ श्री आदि ग्रंथ या ज्ञान गुरु ग्रंथ साहिब है। आमतौर पर सिखों के 10 सतगुरू माने जाते हैं, लेकिन सिखों के धार्मिक ग्रंथ में 6 गुरुओं सहित 30 भगतों की बानी है, जिन की सामान सिख्याओं (शिक्षाओं) को सिख मार्ग पर चलने के लिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है। सिखों के धार्मिक स्थान को गुरुद्वारा कहते हैं।

1469 ईस्वी में पंजाब में जन्मे नानक देव ने गुरूमत को खोजा और गुरूमत की सिख्याओं को देश देशांतर में खुद जा जा कर फैलाया था। सिख उन्हें अपना पहला गुरु मानते हैं। गुरूमत का परचार बाकि 9 गुरुओं ने किया। 10 वें गुरु गोबिन्द सिंह जी ने ये प्रचार खालसा को सोंपा और ज्ञान गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षाओं (सिख्याओं) पर अमल करने का उपदेश दिया। संत कबीर, धना, साधना, रामानंद, परमानंद, नामदेव इत्यादी, जिन की बाणी आदि ग्रंथ में दर्ज है, उन भगतों को भी सिख सत्गुरुओं के समान मानते हैं और उन कि शिक्षाओं पर अमल करने कि कोशिश करते हैं। सिख एक ही ईश्वर को मानते हैं, जिसे वे एक–ओंकार कहते हैं। उनका मानना है कि ईश्वर अकाल और निरंकार है। सिखों के प्रथम गुरु, गुरुनानक देव सिख पंथ के प्रवर्तक हैं। उन्होंने अपने समय के भारतीय समाज में व्याप्त कुप्रथाओं, अंधविश्वासों, जर्जर रूढ़ियों और पाखण्डों को दूर करते हुए जन–साधारण को धर्म के ठेकेदारों, के चंगुल से मुक्त किया। उन्होंने प्रेम, सेवा, परिश्रम, परोपकार और भाई–चारे की दृढ़ नीव पर सिख धर्म की स्थापना की। उदारवादी दृष्टिकोण से गुरुनानक देव ने सभी धर्मों की अच्छाइयों को समाहित किया। उनका मुख्य उपदेश था कि ईश्वर एक है, उसी ने सबको बनाया है। हिन्दू मुसलमान सभी एक ही ईश्वर की संतान हैं और ईश्वर के लिए सभी समान हैं। उन्होंने यह भी बताया है कि ईश्वर सत्य है और मनुष्य को अच्छे कार्य करने चाहिए ताकि परमात्मा के दरबार में उसे लज्जित न होना पड़े।

यहूदी–

यहूदी धर्म इस्राइल और हिब्रूभाषियों का राजधर्म है और इसका पवित्र ग्रंथ तनख– बाइबिल (ओल्ड टेस्टामेंट) का प्राचीन भाग माना जाता है। धार्मिक पैगम्बरी मान्यता मानने वाले धर्म इस्लाम और ईसाई धर्म का आधार इसी परम्परा और विचारधारा को माना जाता है। इस धर्म में एकेश्वरवाद और ईश्वर के दूत यानि पैगम्बर की मान्यता प्रधान है। अपने लिखित इतिहास की वजह से ये कम से कम 3000 साल पुराना माना जाता है। बाबिल (बेबीलोन) के निर्वासन से लौटकर इजरायली जाति मुख्य रूप से यरूसलेम तथा उसके आसपास के ''यूदा'' (Judah) नामक प्रदेश में बस गई था, इस कारण इजरायलियों के इस समय के धार्मिक एवं सामाजिक संगठन को यूदावाद (यूदाइज्म/ Judaism) कहते हैं।

किसी भी प्रकार की मूर्तिपूजा का विरोध यहूदियो की विशेषता है। यहूदी मान्यताओं के अनुसार ईश्वर एक है और उसके अवतार या स्वरूप नहीं है, लेकिन वो दूत से अपने संदेश भेजता है। ईसाई और इस्लाम धर्म भी इन्हीं मान्यताओं पर आधारित है पर इस्लाम में ईश्वर के निराकार होने पर अधिक जोर डाला गया है। यहूदियों के अनुसार मूसा को ईश्वर का संदेश दुनिया में फैलाने के लिए मिला था जो लिखित (तनाख) तथा मौखिक रूपों में था। यहूदीमत के नबियों में हजरत मूसा, हजरत इब्राहिम तथा हजरत नूवा माने जाते है। यहूदी धर्मग्रंथ इब्रानी भाषा में लिखा गया तनख है, जो असल में ईसाइयों की बाइबल का पूर्वार्ध है। इसे पुराना नियम (ओल्ड टेस्टामेन्ट) कहते हैं। वह निम्नलिखित मौलिक सिद्धांतों पर आधारित है –

1. एक ही सर्वशक्तिमान् ईश्वर को छोड़कर और कोई देवता नहीं है।
2. ईश्वर एक न्यायी एवं निष्पक्ष न्यायकर्ता है।
3. ईश्वर इस जीवन में ही अथवा परलोक में भी पापियों को दंड और अच्छे लोगों को इनाम देता है।
4. ईश्वर, स्वर्ग, पृथ्वी तथा सभी चीजों का सृष्टिकर्ता है। सृष्टि ईश्वर का कोई रूपांतर नहीं है क्योंकि ईश्वर की सत्ता, सृष्टि से सर्वथा भिन्न है।
5. समस्त मानव जाति की मुक्ति हेतु अपना विधान प्रकट करने के लिये ईश्वर ने यहूदी जाति को चुन लिया है। यह जाति अब्राहम से प्रारंभ हुई थी (दे0 अब्राहम) ।
6. मसीह का भावी आगमन यहूदी जाति के ऐतिहासिक विकास की पराकाष्ठा होगी। मसीह समस्त पृथ्वी पर ईश्वर का राज्य स्थापित करेंगे और मसीह के द्वारा ईश्वर यहूदी जाति के प्रति उपनी प्रतिज्ञाएं पूरी करेगा।
7. मूसा संहिता यहूदियों के आचरण तथा उनके कर्मकांड का मापदंड था किंतु उनके इतिहास में ऐसा समय भी आया जब वे मूसासंहिता के नियमों की उपेक्षा करने लगे। ईश्वर तथा उसके नियमों के प्रति यहूदियों के इस विश्वासघात के कारण उनको बाइबिल के निर्वासन का दंड भोगना पड़ा।

यहूदी धर्म की उपासना येरूसलेम के महामंदिर में केंद्रीभूत थी। मंदिर के धार्मिक अनुष्ठान तथा त्योहारों के अवसर पर उसमें आजतक भी यहूदी धर्मावलंबी सच्चे मसीह की राह देख रहे हैं। संत पॉल के अनुसार यहूदी जाति किसी समय ईसा को मसीह के रूप में स्वीकार करेगी।

ईसाई या मसीही–

ईसाई धर्म या मसीही धर्म या मसीहयत (christianity) तौहीदी और अब्राहीमी नाम से जाना जाने वाले इस पंथ के अनुयायी ईसाई कहलाते हैं। ईसाई धर्म के पैरोकार ऐसी मसीह की आज्ञाओं पर अमल करते हैं। ईसाईयों में बहुत से समुदाय हैं मसलन कैथोलिक, प्रोटैस्टैंट, आर्थोडोक्स, मॉरोनी, एवनजीलक आदि। ईसाई एकेश्वरवादी हैं, लेकिन वे ईश्वर को त्री–एक के रूप में समझते हैं– परमपिता परमेश्वर, उनके पुत्र ईसा मसीह (यीशु मसीह) और पवित्र आत्मा। अब्राहमी विचार के पंथों में यह मत के प्रवर्तक मसीह (यीशु) एक यहूदी थे जो इस्राइल इजराइल के गाँव बेत्लहम में जन्मे थे (4 ईसा पूर्व)। ईसाई मानते है कि उनकी माता मारिया (मरियम) कुवांरी (वर्जिन) थीं। ईसा उनके गर्भ में परमपिता परमेश्वर की कृपा से चमत्कारिक रूप से आये थे। ईसा के बारे में यहूदी नबियों ने भविष्यवाणी की थी कि एक मसीहा (अर्थात ''राजा'' या तारणहार) जन्म लेगा। कुछ लोग ये मानते हैं कि ईसा भारत भी आये थे। बाद में ईसा ने इजराइल में यहूदियों के बीच प्रेम का संदेश सुनाया और कहा कि वो ही ईश्वर के पुत्र हैं। इन बातों पर पुराणपंथी यहूदी धर्मगुरु भड़क उठे और उनके कहने पर इजराइल के रोमन राज्यपाल ने ईसा को क्रूस पर चढ़ कर मरने का प्राणदण्ड दे दिया। ईसाई मानते हैं कि इसके तीन दिन बाद ईसा का पुनरुत्थान हुआ या ईसा पुनर्जीवित हो गये। ईसा के उपदेश बाइबिल के नये नियम में उनके शिष्यों द्वारा रेखांकित किये गये हैं। इन उपदेशों के अनुसार परमपिता इस सृष्टि के रचयिता हैं और इसके शासक भी। ईसा मसीह स्वयं परमेश्वर थे जो पतन हुए (पापी) सभी मनुष्यों को पाप और मृत्यु से बचाने के लिए जगत में देहधारण होकर (देह में होकर) आए थे और परमेश्वर जो आत्मा हैं, ने एक देह में प्रगट हुए ताकि पापी मनुष्यों को नहीं परन्तु मनुष्यों के अन्दर के पापों को खत्म करें। वे इस पृथ्वी पर पहले ऐसे ईश्वर थे जो पापी, बीमार, मूर्खों और सताए हुए का पक्ष लिया और उनके बदले में पाप की कीमत अपनी जान देकर चुकाई ताकि मनुष्य बच सकें । हमारे पापों की सजा यीशु मसीह ने चूका दिए इसलिए हमें पापों से क्षमा मिलती है। यह पापी मनुष्य और पवित्र परमेश्वर के मिलन का मिशन था जो प्रभु यीशु के कुरबानी से पूरा हुआ । एक श्रृष्टिकर्ता परमेश्वर हो कर उन्होंने पापियों को नहीं मारा परन्तु पाप का इलाज किया। ईसाईयत की प्रमुख पुस्तक पवित्र बाइबिल है। यह पंथ प्रेम एवं क्षमा के आधार पर मानवता से पाप को समाप्त करने का लक्ष्य रखता है।

इस्लाम–

इस्लाम अब्राहमी श्रृंखला का एक एकेश्वरवादी धर्म है, जो इसके अनुयायियों के अनुसार, अल्लाह के अंतिम रसूल और नबी, मुहम्मद द्वारा मनुष्यों तक पहुंचाई गई अंतिम ईश्वरीय पुस्तक कुरान की शिक्षा पर आधारित है। मुसलमान एक ही ईश्वर को मानते हैं, जिसे वे अल्लाह (फारसी में खुदा) कहते हैं। एकेश्वरवाद को अरबी में तौहीद कहते हैं, जो शब्द वाहिद से आता है, जिसका अर्थ है एक। इस्लाम में ईश्वर को मानव की समझ से परे माना जाता है। मुसलमानों से ईश्वर की कल्पना करने के बजाय उसकी प्रार्थना और जय–जयकार करने को कहा गया है। ईश्वर एक और अनुपम, सनातन, सदा से सदा तक जीने वाला है, न उसे किसी ने जना और न ही वो किसी का जनक है एवं उस जैसा कोई और नहीं है।"

इस्लाम के अनुसार ईश्वर ने धरती पर मनुष्य के मार्गदर्शन के लिये समय समय पर किसी व्यक्ति को अपना दूत बनाया। यह दूत भी मनुष्य जाति में से होते थे और ईश्वर की ओर लोगों को बुलाते थे। ईश्वर इन दूतों से विभिन्न रूपों से सम्पर्क रखता था। इन को इस्लाम में नबी कहते हैं। जिन नबियों को ईश्वर ने स्वयं, शास्त्र या धर्म पुस्तकें प्रदान कीं उन्हें रसूल कहते हैं। मुहम्मद भी इसी कड़ी का भाग थे। उनको जो धार्मिक पुस्तक प्रदान की गयी उसका नाम कुरान है। सभी मुसलमान ईश्वर द्वारा भेजे गये सभी नबियों की वैधता स्वीकार करते हैं और मुसलमान, मुहम्मद को ईश्वर का अन्तिम नबी मानते है।

इस्लाम के 5 स्तंभ हैं–

1. साक्षी होना (शहादा)– इस का शाब्दिक अर्थ है गवाही देना। इस्लाम में इसका अर्थ मे इस अरबी घोषणा से है (अल्लाह् के सिवा और कोई परमेश्वर नहीं है और मुहम्मद अल्लाह के रसूल है) इस घोषणा से हर मुसलमान ईश्वर की एकेश्वरवादिता और मुहम्मद के रसूल होने के अपने विश्वास की गवाही देता है। यह इस्लाम का सबसे प्रमुख सिद्धांत है। हर मुसलमान के लिये अनिवार्य है कि वह इसे स्वीकारे।

2. प्रार्थना (सलात)– इसे फारसी में नमाज भी कहते हैं। यह एक प्रकार की प्रार्थना है जो अरबी भाषा में एक विशेष नियम से पढ़ी जाती है। इस्लाम के अनुसार नमाज ईश्वर के प्रति मनुष्य की कृतज्ञता दर्शाती है। यह मक्का की ओर मुँह कर के पढ़ी जाती है। हर मुसलमान के लिये दिन में 5 बार नमाज पढ़ना अनिवार्य है। विवशता और बीमारी की हालत में इसे नहीं टाला जा सकता है।

3. रोजे रखना (रमजान में)– इस के अनुसार इस्लामी कैलेंडर के नोवें महीने (रमजान) में सभी सक्षम मुसलमानों के लिये आवश्यक (फरज) सूर्योदय से पूरब (मगरिब) से सूर्यास्त तक व्रत रखना अनिवार्य है। इस व्रत को रोजा भी कहते हैं। रोजे में हर प्रकार का खाना–पीना वर्जित है। अन्य व्यर्थ कर्मों से भी अपने आप को दूर रखा जाता है। यौन गतिविधियाँ भी वर्जित हैं। विवशता में रोजा रखना आवश्यक नहीं होता। रोजा रखने के कई उद्देश्य हैं जिन में से दो प्रमुख उद्देश्य यह हैं कि दुनिया

के बाकी आकर्षणों से ध्यान हटा कर ईश्वर से निकटता अनुभव की जाए और दूसरा यह कि निर्धनों, भिखारियों और भूखों की समस्याओं और परेशानियों का ज्ञान हो।

4 दान (जकात)– यह एक वार्षिक दान है जो कि हर आर्थिक रूप से सक्षम मुसलमान को निर्धन मेसलमानों में बांटना अनिवार्य है। अधिकतर मुसलमान अपनी वार्षिक आय का पांचवा हिस्सा दान में देते हैं। यह एक धार्मिक कर्तव्य इस लिये है क्योंकि इस्लाम के अनुसार मनुष्य की पूंजी वास्तव में ईश्वर की देन है। और दान देने से जान और माल कि सुरक्षा होती हे।

5. तीर्थ यात्रा (हज)– हज उस धार्मिक तीर्थ यात्रा का नाम है जो इस्लामी कैलेण्डर के 12वें महीने में मक्का में जाकर की जाती है। हर समर्पित मुसलमान (जो हज का खर्च उठा सकता हो और विवश न हो) के लिये जीवन में एक बार इसे करना अनिवार्य है।

बहाई पंथ–

बहाई पंथ उन्नीसवीं सदी के ईरान में ई. 1844 मे स्थापित एक नया धर्म है जो एकेश्वरवाद और विश्वभर के विभिन्न धर्मों और पंथों की एकमात्र आधारशिला पर जोर देता है।

इसकी स्थापना बहाउल्लाह ने की थी और इसके मतों के मुताबिक दुनिया के सभी मानव धर्मों का एक ही मूल है। इसके अनुसार कई लोगों ने ईश्वर का संदेश इंसानों तक पहुँचाने के लिए नए धर्मों का प्रतिपादन किया जो उस समय और परिवेश के लिए उपयुक्त था। इस धर्म के अनुयायी बहाउल्लाह को पूर्व के अवतारोंकृष्ण, ईसा मसीह, मुहम्मद, बुद्ध, जरथुस्त्र, मूसा आदि की वापसी मानते हैं। समस्त पृथ्वी एक देश है और मानवजाति इसकी नागरिक है । बहाई धर्म के अनुयायी सम्पूर्ण विश्व के लगभग 180 देशों में समाज–नवनिर्माण के कार्यों में जुटे हुए हैं। बहाई धर्म में धर्म गुरु, पुजारी, मौलवी या पादरी वर्ग नहीं होता है। बहाई अनुयायी जाति, धर्म, भाषा, रंग, वर्ग आदि किसी भी पूर्वाग्रहों को नहीं मानते हैं।

इसके सिद्धांतों में प्रमुख हैं –ईश्वर एक है। सभी धर्मों का स्त्रोत एक है। विश्व शान्ति एवं विश्व एकता। सभी के लिए न्याय। स्त्री–पुरुष की समानता। सभी के लिये अनिवार्य शिक्षा। विज्ञान और धर्म का सामंजस्य। गरीबी और धन की अति का समाधान। भौतिक समस्याओं का आध्यात्मिक समाधान। सम्पूर्ण विश्व के बहाई अपना योगदान इस नई विश्व व्यवस्था में निम्नलिखित प्रयासों से कर रहे हैं। इस विश्वव्यापी कार्यक्रम को मनुष्य और समाज की ऐसी अवधारणा पर केंद्रित किया गया है जो अपनी प्रकृति में आध्यात्मिक है और मनुष्य को ऐसी क्षमता प्रदान करता है जो आध्यात्मिक और भौतिक विकास की प्रक्रिया में प्रखरता प्रदान करता है।

उपर्युक्त पंथों के अतिरिक्त भी बहुत से आध्यात्मिक आस्था एवं पूजा पद्धतियां के संसार में है परन्तु सभी पंथ का लक्ष्य मनुष्य को ईश्वर की दिशा में कल्याण की ओर ले जाना है। सभी मत ईश्वरीय सत्ता को किसी न किसी प्रकार से स्वीकारते है और अंतिम रूप से एकेश्वर के सिद्धान्त की ओर ले जाते है। नैतिक मूल्य से मानव को समूह में बांधे रखना एवं परस्पर प्रेम को स्थापित करना, मनुष्यों के मध्य भेद को कम करना तथा उनके जीवन संचालन को स्थाई स्वरूप प्रदान करना सभी मतों का लक्ष्य रहा है। पूजा अथवा उपासना पद्धतियों की भिन्नता, उनके लक्ष्य की भिन्नता का परिचायक नहीं है वरन् यह कथन सही है कि प्रत्येक पंथ या मत रूपी धारा ईश्वर रूपी सागर में मिलने की दिशा में मनुष्य को अग्रसर करती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. अंग्रेजी का रिलिजन शब्द का अर्थ ही है ''एक साथ बांधना''। भारतीय अवधारणा में धर्म का अर्थ है धारण करना। फिर भी धार्मिक संघर्ष अथवा तनाव सही मायने में जातीय एवं सांस्कृतिक संघर्ष को धर्म या रिलिजन के साथ जोड़ कर उसे व्यापक स्वरूप दिया जाना है। जिस प्रकार धार्मिक कुरूतियों ने नये धर्मों (रिलिजन) को जन्म दिया, उसी प्रकार धार्मिक संघर्षों ने ही धर्म समन्वय का मार्ग प्रशस्त किया।
2. धार्मिक सहिष्णुता और धार्मिक स्वतन्त्रता में धनात्मक संबंध अवश्य है, परन्तु दोनों एक नहीं है। प्रथम मुख्यतः वैचारिक अवधारणा है, जबकि द्वितीय विविध अवधारणा।
3. धर्म–सहिष्णुता में व्यक्ति धार्मिक बना रहता है, बस अन्य धर्मों के प्रति द्वेष भाव समाप्त कर लेता है।
4. धार्मिकता की दूसरी बड़ी विड़म्बना यह है कि यह परिवार से जन्म लेती है। धर्म किसी व्यक्ति का बौद्धिक चयन नही, इसका पारिवारिक संस्कार होता है
5. धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता सबसे ज्यादा ऐसे कर्मकाण्डीय व औपचारिक विधानों के कारण है, जो आज या तो निरर्थक हो गए हैं या फिर दूसरों के लिए बाधक बन गए है।
6. धार्मिक बहुत्ववाद का बल धर्मों के विविधतापूर्ण सह–अस्तित्व पर है, जबकि धार्मिक समभाव का विविध धर्मों समादर है।
7. जैन धर्म के प्रथम प्रर्वतक ऋषभदेव को हिन्दू धर्म के चौबिस अवतारों में तथा बौद्धधर्म के प्रर्वतक गौतम बुद्ध को दस अवतारों में परिगणित किया गया है।
8. भारत में धर्म निरपेक्षता, जिसे पंथ निरपेक्षता के अनुरूप यदि माना जाए तो यह अर्वाचीन धारणा है। हमारी

धार्मिक एकता, सहिष्णुता, उदारता और समभाव की सतत् परम्परा इसका सुस्पष्ट प्रमाण है।

9. हिन्दू धर्म नाम से किसी सम्प्रदाय को निरूपित नहीं किया जाता वरन् उक्त एक जीवन पद्धति का नाम है, जो सनातन काल से ही मानवकल्याण की दिशा मानव एवं विश्व को जीवन दर्शन देती आयी है।

10. बुद्ध के अनुसार मानव जीवन दुःखों से भरा हुआ है। बौद्ध धर्म में चार आर्य सत्य माने गये हैः– (1) दुःख है (2) दुःख का कारण है (3) दुःख का निरोध है एवं (4) दुःख निरोध का मार्ग है।

11. बौद्धमत में की विशेषता उसका कर्म सिद्धान्त है उसके अनुसार '' अपने कर्मो के अन्तर के कारण मनुष्य एक समान नहीं होते।

12. अहिंसा को सर्वोपरी मानने वाले जैन मत में चार कषाय है तो बंधन के कारण माने जाते है –क्रोध, मान, माया, जिनके कारण कर्मो का आस्रव जीव की ओर होता है।

13. सिखों के प्रथम गुरु, गुरुनानक देव सिख पंथ के प्रवर्तक हैं। उन्होंने अपने समय के भारतीय समाज में व्याप्त कुप्रथाओं, अंधविश्वासों, जर्जर रूढ़ियों और पाखण्डों को दूर करते हुए जन–साधारण को धर्म के ठेकेदारों, के चंगुल से मुक्त किया।

14. इस्लाम अब्राहमी श्रृंखला का एक एकेश्वरवादी धर्म है, जो इसके अनुयायियों के अनुसार, अल्लाह के अंतिम रसूल और नबी, मुहम्मद द्वारा मनुष्यों तक पहुंचाई गई अंतिम ईश्वरीय पुस्तक कुरआन की शिक्षा पर आधारित है।

15. ईसाई एकेश्वरवादी हैं, लेकिन वे ईश्वर को त्री–एक के रूप में समझते हैं– परमपिता परमेश्वर, उनके पुत्र ईसा मसीह (यीशु मसीह) और पवित्र आत्मा।

अभ्यास के प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. रिलिजन शब्द का अर्थ है?
   (अ) एक साथ बांधना (ब) खोलना
   (स) पूजा करना (द) खेलना
2. सबसे पहले धार्मिकता जन्म लेती है ?
   (अ) परिवार से (ब) पड़ोस से
   (स) स्कूल से (द) किताब से
3. भारत से गये किस धर्म को चीन में स्वीकार किया ?
   (अ) बौद्ध (ब) जैन
   (स) ईसाई (द) यहूदी
4. निम्न में से कौनसा रिलिजन अब्रहामिक श्रेणी का नहीं है?
   (अ) सनातन (ब) इस्लाम
   (स) मसीही (द) यहूदी
5. जैन धर्म अनुसार कषाय कितने है ?
   (अ) चार (ब) तीन (स) दो (द) दस
6. एक औकांर के रूप में एकेश्वर कौनसा पंथ मानता है ?
   (अ) ईसाई (ब) बहावी
   (स) जैन (द) सिख
7. हजरत मूसा ने किस पंथ को बनाया ?
   (अ) यहूदी (ब) ईसाई
   (स) जैन (द) इस्लाम
8. बौद्ध धर्म में उल्लेखित आर्य सत्य कितने है ?
   (अ) दो (ब) चार
   (स) दस (द) पांच
9. ऋषभदेव जैन धर्म के कौनसे तीर्थकंर थे ?
   (अ) पहले (ब) दूसरे
   (स) सांतवें (द) चौबीसवें
10. पंथ में पुजारी, मौलवी, पादरी, ग्रंथी, धर्मगुरू नहीं होता ?
    (अ) सिख में (ब) हिन्दु में
    (स) बहावी में (द) इस्लाम में

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. धार्मिक समन्वय की अवधारणाएं कौनसी है ?
2. धार्मिक सहिष्णुता का तात्पर्य क्या है ?
3. धार्मिक बहुत्ववाद का क्या अर्थ है ?
4. चार पुरूषार्थ कौन कौन से है ?
5. बौद्ध धर्म के अनुसार आर्य सत्य कौनसे है ?
6. ''जिन'' शब्द का अर्थ क्या होता है ?
7. खालसा पंथ का प्रारंभ कौनसे सिख गुरू ने किया था ?
8. ओल्ड़टेस्टामेंट किस धर्म का धर्मग्रंथ है ?
9. एकेश्वरवाद को अरबी में क्या कहते है ?
11. बहाउल्लाह ने किस मत को प्रारंभ किया ?
12. राजा रखना किस धर्म हेतु आवश्यक है ?
13. किस धर्म के अनुयायी जकात निकालते है ?

14. सर्वधर्म समभाव क्या है ?
15. धार्मिक सहिष्णुता एवं सर्वधर्म समभाव समान है ? नहीं तो कोई एक कारण बताएं।
16. स्यादवाद किस धर्म की विशेषता है ?
17. सर्वधर्म समभाव का उदाहरण चीन कैसे है ?
18. किन्ही तीन अब्रहमिक अवधारणा के पंथों के नाम लिखे ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. हिन्दू एक धर्म नहीं जीवनशैली है कथन की पुष्टि करें ।
2. मसीही एवं इस्लाम में क्या समानताएं है कोई चार लिखे।
3. सभी धार्मिक मतो का लक्ष्य मानव कल्याण है किन्ही दो मतो का उदाहरण देकर पुष्ट करें।
4. धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता क्यों है स्पष्ट कीजिये
5. अब्रहमिक सम्प्रदायों में पारस्परिक समानता उल्लेखित कीजिये ।
6. बौद्ध धर्म के अनुसार दुःख का निवारण कैसे संभव है ? उसके बताये मार्ग को बताईये।
7. धर्मबहुत्ववाद सें सर्वधर्म समभाव भिन्न है स्पष्ट कीजिये।
8. हिन्दुत्व एक जीवन शैली है न कि रिलिजन अपने शब्दों में सौदाहरण बताईये।
9. धार्मिकता की उत्पति जन्म से हो जाती है ? कथन से आप कितना सहमत है ? यदि हाँ तो इसके प्रभाव बताईये।
10. बहावी धर्म मानवतावाद की ओर एक कदम है, व्याख्या कीजिये।

निबंधात्मक प्रश्न–

1. धार्मिक असहिष्णुता के कारण तथा सहिष्णुता के उपाय पर विस्तृत व्याख्या कीजिये।
2. हिन्दू एक सम्प्रदाय नहीं है वरन् जीवन पद्धति है, कथन को स्पष्ट कीजिये एवं इस संस्कृति के धार्मिक समभाव के उदाहरणों को व्यक्त कीजिये।
3. धार्मिक समन्वय की प्रमुख अवधारणाऐं क्या है ? धार्मिक समभाव, धर्मनिरपेक्षता एवं बहुधर्मवाद से भिन्न है स्पष्ट कीजिये।
4. इस्लाम के उद्‌भव एवं उनकी प्रमुख शिक्षा को लिखिये तथा यह अन्य अब्रहमिक अवधारणा के सम्प्रदायों से कैसे भिन्न है उसे भी उल्लेखित कीजिये।
5. सिख पंथ कुरीतियों को दूर करने एवं भारतीय संस्कृति में परिष्कार के लिये बना। कथन की पुष्टि करते हुए सिख धर्म का परिचय दीजिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की उत्तर माला

1 (अ) 2 (अ) 3 (ब) 4 (स) 5 (अ)
6 (अ) 7 (अ) 8 (द) 9 (द) 10 (ब)

संदर्भ ग्रंथ

1. धर्म तत्त्व का दर्शन और मर्म– पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय (अखण्ड ज्योति संस्थान, मथूरा)
2. धर्म–दर्शन– डॉ. कृष्णा कांत पाठक (राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल)
3. धर्म–दर्शन– डॉ. रामनारायण व्यास (मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल)